Chapter. 7

अध्याय : ७

"उपसंहार"

उपन्यास इस नये युग के नये साहित्य की नयी विधा है। पश्चिम में भी, जहाँ उसका उद्‌भव हुआ, यह विधा नयी नहीं थी। वहाँ उत्क्रांति के पश्चात् नव्य समाज रचना के जीवनमूल्यों को उकेरने के लिए इस नयी विधा का उदभव्-आगम हुआ था। इस नव्यता के कारण ही उसे ''नोवॅल'' कहा गया। हमारे यहाँ नवजागरण के पश्चात जिन नवीन सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, नैतिक, शैक्षिक परिस्थितियों का निर्माण हुआ उनके तहत इस विधा का आगमन हुआ। गद्य का आविर्भाव, औद्योगिकरण, नगरीकरण, सामन्तवादी जीवनमूल्यों पर पूंजीवाद का दबाव प्रभृति कारणों से न केवल हिन्दी साहित्य, अपितु समग्र भारतीय साहित्य में गद्य की अनेकानेक विधाओं का उदभव हुआ। आदिकाल या मध्यकाल में गद्यकी इन विधाओं का सर्वथा अभाव मिलता है। आदिकाल तथा मध्यकाल में गद्य बिलकुल नहीं था, ऐसा नहीं

है, परन्तु वह अत्यंत स्वल्प मात्रा में था । जो गद्यकृतियाँ उपलब्ध होती हैं उन पर भी प्रायः काव्य का प्रभाव दृष्टिगत होता है । वह पद्य के स्थान पर आया हुआ गद्य प्रतीत होता है । अतः उसमें वैज्ञानिक विश्लेषण तर्क-वितर्क, गंभीर चिंतन विमर्श को अभिव्यंजित करने की क्षमता नहीं थी । संस्कृत का गद्य संपन्न और पूर्णरुपेण परिमार्जित था । पता नहीं क्यों संस्कृत की यह विरासत अग्रसरित नहीं हो पायी । अभिप्राय यह कि गद्य का आविर्भाव आधुनिक काल का अपना एक अभिलक्षण है । कदाचित इसे लक्ष्य करके ही आचार्य रामचन्द्र शुक्लने हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल को गद्यकाल कहा था ।

भारतीय साहित्य, समाज तथा संस्कृति के संदर्भ में उन्नीसवीं शताब्दी का विशेष महत्व है । ब्रिटीश साम्राज्य भारत में स्थापित हो चुका था । ईसाई धर्म-प्रचारक भारतवर्ष के कोने-कोने में ईसाई धर्म का प्रचार कर रहे थे । ऐसी स्थिति में इसे बिलकुल स्वाभाविक कहा जाएगा कि अन्य धर्म की विसंगतियों, विषमताओं और विडंबनाओं को खुले करने वाले छिद्रों पर ध्यान आकर्षित किया जाए । यहाँ अन्य धर्म हिन्दु धर्म था । जिस प्रकार मध्यकाल में ईसाई धर्म में धर्म के नाम पर भ्रष्टाचार और कदाचार ने अपना अड्डा जमा लिया था और उत्क्रांति के समय उस धर्म के खिलाफ विद्रोही आवाजें उठी थीं और नये मूल्यों की स्थापना हुई थी । हमारे यहाँ उसकी आवश्यकता थी । गलत परंपराओं और रूढियों के नाम पर धर्म के खाते पर अनावश्यक और अनर्गल बातें चढ़ गई थी । वस्तुतः उसका परिहार्य आवश्यक था । परन्तु हमारे यहाँ यह तब हुआ जब विदेशी धर्म प्रचारकों की ओर से अस्तित्व का संकट उपस्थित हुआ । फलतः हमारे यहाँ के आचार्यों, विद्वानों तथा विज्ञजनों ने धर्म को खंगाल ने का काम शुरू किया । तब उन्हें ज्ञान हुआ कि धर्म के नाम पर परंपराओं और रूढ़ियों के नाम पर कितना अधर्म

चल रहा था । फलतः आर्य समाज, ब्रह्मोसमाज, प्रार्थनासमाज, थियोसोफिकल सोसायटी, हिन्दु महासभा, राष्ट्रीय काँग्रेस प्रभृति धार्मिक सामाजिक संगठनों के द्वारा भारतीय समाज में घर कर गई ऐसी रूढ़ियों पर प्रहार होने लगें । राजा राममोहनराय, केशवचन्द्र सेन, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, दयानंद सरस्वती, महादेव गोविंद रानड़े, ज्योतिबा फूले, पंडिता रामाबाई, नारायण गुरु, विवेकानंद, महात्मा गांधी, रवीन्द्रनाथ टेगोर, नर्मद, दुर्गाप्रसाद खोटे, नवलराम जैसे महानुभावों के कारण समाज में नव्य चिंतन की एक लहर-सीं दौड़ गई । सदियों से सोया समाज जाग उठा । नारी शिक्षा, दहेजप्रथा का निषेध, शिशुविवाह और वृद्ध विवाह का निषेध, जाति प्रथा का विरोध, अस्पृश्यता का विरोध, हिन्दू मुस्लिम वैमनश्य का विरोध जैसे मुद्दे उभर कर आयें । नॉवेल नव्यता की ही विधा है । उसे हमेशा नये विषयों की आवश्यकता होती है । अतः यह सामाजिक सांस्कृतिक उत्क्रांति का परिवेश उसे पूर्णतया अपनी प्रकृति के अनुरुप लगा और उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध से लगभग सभी भारतीय भाषाओं में यह नयी विधा पूर्णरुपेण छा गयी । प्रारंभ में उपन्यास लिखना और पढ़ना, हलके स्तर का काम माना जाता था । परन्तु जैसे ही उसमें जीवन के, गंभीर जीवनदर्शन के सामाजिक मुद्दों और सरोकारों की प्रवृत्तियाँ संपृक्त होने लगी, पाश्चात्य साहित्य की भाँति यहाँ भी उपन्यास एक महान साहित्यिक विद्या के रूपमें उभरने लगा ।

हिन्दी तथा मराठी में नोवेल के निए 'नवलकथा' शब्द मिलता है । दक्षिण की कईं भाषाओं में भी उससे मिलते-जुलते शब्द इस विधा के लिए प्रयुक्त हुए हैं परन्तु हिन्दी तथा बंगला में उसे उपन्यास कहा गया है । वस्तुतः 'उपन्यास' शब्द हमें नाट्यशास्त्र में मिलता है । परन्तु यहाँ वह शब्द प्रतिमुख संधि के एक उपभेद के लिए आया है, जिसका अर्थघटन दो तरह से हुआ है - मनोरंजन या आनंद प्राप्ति तथा युक्तिपूर्वक किसी बात को कहना । पश्चिम

से आयातित इस नये साहित्य प्रकार में उपर्युक्त दोनों तत्वों की विद्यमानता को लक्षित करके बहुत सुचिंतित ढंग से इस नयी विधा का नामकरण 'उपन्यास' के रूपमें हुआ होगा ।

उपन्यास की जितनी परिभाषाएँ उपलब्ध होती हैं उन पर यदि विहंगम दृष्टिपात करें तो ज्ञापित होगा कि उपन्यास एक यथार्थधर्मी विधा है । यथार्थधर्मिता को हम उसका प्राणतत्व कह सकते हैं । कथानक, पात्रों का चरित्र चित्रण, कथोपकथन, देशकाल निरुपण सभी में यथार्थ दृष्टि का आग्रह रहता है । उपन्यासो में निरूपित यथार्थ दो प्रकारों का हो सकता है - सामाजिक जीवन पर आधारित यथार्थ और वैयक्तिक जीवन पर आधारित यथार्थ । मनोवैज्ञानिक उपन्यासों का प्रस्थान बिन्दु यहाँ से शुरू होता है । सामाजिक उपन्यासो में समाज और उसके वर्ग-संघर्ष को निरुपित किया जाता है । मनोवैज्ञानिक उपन्यासो में व्यक्ति मन के यथार्थ को, उसके अंतर्द्वन्द्ध को उकेरा जाता है । यहाँ यात्रा स्थूलता से सूक्ष्मता की ओर होती है । मुन्शी प्रेमचंद ने कहा था मैं उपन्यास को मानव चरित्र का चित्र मात्र समझता हूँ । यहाँ 'चित्र' शब्द पर ध्यान देने की आवश्यकता है । चित्र कहने से यत्न या प्रयास की बात सामने आती है । चित्र बनाने का यत्न किया जा सकता है, पर कोई चित्र कभी पूर्ण नहीं होता । ठीक उसी प्रकार मानवचरित्र भी पकड़ में नहीं आ सकता । मनुष्य का मन अत्यंत जटिल एवं पेचीदा होता है । उसका पार पाना कठिन है । मनुष्य के मन को, उसकी अटल गहराइयाँ को छूना अत्यंत कठिन और दुष्कर है । मनोविज्ञान मनुष्य के मन, विशेषतः उसके अचेतन मन को समझने की चेष्टा करता है । १९वीं शताब्दी और बीसवीं शताब्दी अनेक नये क्रांतिकारी विचारों और दर्शनों की शताब्दी रही है । पिछले सो डेढ़सौ वर्षों में मनोविज्ञान के क्षेत्र में भी अनेक नये अनुसंधान हुए हैं । अनेक नये सिध्धान्त सामने आए हैं । फ्रायड, एडलर, युंग, पावलोव,

जिन पायागेट जैसे मनोवैज्ञानिकों के कारण अनेक मनोवैज्ञानिक सिध्धान्त सामने आये हैं, जिसके आलोक में हम मनुष्य के मन और उसके अचेतन में संग्रहीत और पड़ी हुई वस्तुओं का अध्ययन कर सकते हैं। उपन्यास इतिहास, पुराण, समाजशास्त्र जैसे विषयों के पास पहुँचा है, ठीक उसी तरह उसने मनोविज्ञान को भी आत्मसात् करने का प्रयत्न किया है। ऐसे उपन्यासों को हम मनोवैज्ञानिक उपन्यासों की संज्ञा दे सकते हैं।

वैसे थोड़ा बहुत मनोविज्ञान तो सभी प्रकार की साहित्यिक कृतियों में पाया जाता है। आदिकालीन और मध्यकालीन काव्यकृतियों में भी मनोवैज्ञानिक चित्र उपलब्ध होते हैं। जब मनोविज्ञान पर कोई खास छानबीन नहीं हुई थी या विज्ञान के रूप में उसका विकास नहीं हुआ था परन्तु मनोवैज्ञानिक उपन्यास उन उपन्यासों को कहा जाता है जिनके केन्द्र में ही मनोवैज्ञानिक सिध्धान्त रहते हैं। जिस प्रकार ऐतिहासिक, पौराणिक या राजनीतिक उपन्यास क्रमशः इतिहास, पुराण तथा राजनीतिक हलचलों पर आधृत होते हैं; ठीक उसी प्रकर मनोवैज्ञानिक उपन्यास मनोविज्ञान के सिध्धान्तों पर आधारित होते हैं। यदि किसी उपन्यास में बाह्य घटना के स्थान पर अनुभूति के आत्मनिष्ठ रुप को गृहण किया जाता है तो ऐसे उपन्यास को हम मनोवैज्ञानिक उपन्यास कह सकते हैं।

मानव मन को समझने के लिए मनोविश्लेषण की प्रक्रिया से गुजरता पड़ता है। मनोवैज्ञानिकों ने मनोविश्लेषण के सम्बन्ध में तीन विधियों का निर्देश दिया है - (१) अंतः प्रेक्षण विधि (Introspection) (२) बाह्य निरीक्षण विधि (observasion) तथा (३) प्रयोगविधि (experimantal method)। मनोवैज्ञानिक उपन्यासों का लेखक इन विधियों का प्रयोग अपनी सृजनशीलता में करता है।

मनोवैज्ञानिक उपन्यासो में मनोवैज्ञानिक कथावस्तु तथा मनोवैज्ञानिक समस्याओं का आकलन होता है । उपन्यास की अन्य विधाओं की तुलना में मनोवैज्ञानिक उपन्यास अधिक अन्तुर्मुखी होता है । उसकी कथावस्तु अधिक सूक्ष्म होती है । वर्णनात्मकता की अपेक्षा उसमें नाटकीयता, प्रतीकात्मकता और सांकेतिकता की ओर अधिक ध्यान दिया जाता है । मनोवैज्ञानिक उपन्यासों से अलग सामाजिक उपन्यासो में उनके पात्रों की कुछ चुनी हुई विशेषताएँ होती हैं । अतः उनकी गतिविधियाँ कुछ निर्धारित होती हैं । किन्तु मनोवैज्ञानिकों का लक्ष्य उन पात्रों का मनोविश्लेषण होता है । मनुष्य वास्तव में कैसा है उसको ज्ञापित करना ही मनोवैज्ञानिक उपन्यासकारों का लक्ष्य होता है । मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार मानते हैं कि सक्रिय जीवन ही केवल जीवन नहीं है, बल्कि सक्रिय जीवन अधिक महत्वपूर्ण भी नहीं है । वास्तविक जीवन तो विचारों और अनुभूतियों का आंतरिक जीवन है । मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार इस आंतरिक जीवन को केन्द्रमें रखकर चलता है । संक्षेप में मानव मन की अतल गहराइयों, मानव ग्रंथियों और मानव व्यवहार की पेचीदगियों को समझने का प्रयास जिन उपन्यासों में होता है उनको हम मनोवैज्ञानिक उपन्यास कह सकते हैं । वैयक्तिक यथार्थ की पहचान, मनोवैज्ञानिक अनुसंधान, नारी के व्यक्तित्व की पहचान, पुरुष का आहत अभिमान, अतिबौधिकता, नगरीकरण, भौतिकता का अति आग्रह, पारिवारिक विघटन आदि कुछ ऐसे कारक हैं जिन्होंने मनौवैज्ञानिक उपन्यासों को अग्रसरित करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है ।

संक्षेपमें मनोवैज्ञानिक उपन्यास चैतसिक यथार्थ को उद्घाटित करता है। परिणामतः उसमें मनोवैज्ञानिक समस्याओं, गुत्थियों और ग्रंथियों को उकेरने की तथा उनको विश्लेषित करने की प्रवृति रहती है । प्रस्तुत प्रबन्ध का प्रतिपाद्य ही मनोवैज्ञानिक उपन्यासों से सम्बद्ध होने के कारण इसमें मनोवैज्ञानिक

क्षण, मनोवैज्ञानिक ग्रंथियों, मनोवैज्ञानिक समस्याओं तथा मनोवैज्ञानिक कामजनित कुंठाओं के विश्लेषण का विशेष उपक्रम और आग्रह रहा है ।

मानवीय प्रवृत्ति प्रायः दो दिशाओं में गतिमान होती है - Man in action एवम् man in contemplation । मनोवैज्ञानिक उपन्यासोमें दूसरे प्रकार की प्रवृत्ति उपलब्ध होती है । सामाजिक उपन्यासों तथा प्रबन्ध काव्यों में जीवन के मार्मिक प्रसंगों की अनुभूति करानेवाले क्षणों का प्राधान्य रहता है । आँचालक व्यंग्य तथा नाटकीय उपन्यासों में क्रमशः लोकजीवनरस के क्षण, व्यंग्यात्मक क्षण और नाटकीय वक्रोक्ति के क्षणों को अग्रिमता मिलती है । ठीक उसी प्रकार मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में, मनोवैज्ञानिक क्षणों (Psychological moments) की अभिव्यक्ति अपरिहार्य रूप से बढ़ जाती है । सत्य की प्राप्ति सुदीर्ध जीवनपट में नहीं, मन के विषयो में नहीं, अपितु कुछ एक मनोवैज्ञानिक क्षणों में होती है । इन मनोवैज्ञानिक क्षणों की पहचान ही मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार को सफलता प्रदान करती है । दार्शनिक भाषामें जिसे प्रेय और श्रेय का संघर्ष कहते हैं एक मनोवैज्ञानिक की दृष्टि से वह 'Id' और 'ego' का संघर्ष होता है। जिन क्षणों में यह संघर्ष घटित होता है, उनको हम मनोवैज्ञानिक क्षण कह सकते हैं । मनोवैज्ञानिक क्षणों की भाँति मनोवैज्ञानिक ग्रंथियों का विश्लेषण भी मनोवैज्ञानिक उपन्यासकारों का एक रसप्रद विषय है । दमित कुंठाओं के कारण ग्रंथियों का निर्माण होता है । लघुताग्रंथि भी मानवजीवन और व्यवहार को अनेक दृष्टियों से प्रभावित करती है । कामकुंठा, अर्थकुंठा और जातिगत कुंठा के कारण लघुताग्रंथि का निर्माण होता है । लघुताग्रंथि के कारण व्यक्ति सहज नहीं रह पाता है । उसके व्यवहार में किसी न किसी प्रकार की त्रुटि दृष्टिगत होती है । प्रभुत्वग्रंथि, लघुताग्रंथि के विलोमी छोर पर है । प्रभुत्वग्रंथि, फ्रिजीडिटी कोम्पेलेक्स, निम्फोमेनिया, फोबियाग्रंथि जैसी ग्रंथियों के कारण भी व्यक्ति असाधारणता

(abnormal) का व्यवहार करता है ।

जिस प्रकार आर्थिक, नैतिक, धार्मिक, सांप्रदायिक समस्याएँ होती हैं, ठीक उसी प्रकार कुछ मनोवैज्ञानिक समस्याएँ भी होती हैं । मनोवैज्ञानिक उपन्यासो में इन समस्याओं को विश्लेषित करने का प्रयत्न रहता है । ऐसी मनोवैज्ञानिक समस्याओ में शिशु मन की समस्याएँ पति-पत्नी के अहम और तनाव की समस्या, काम की समस्याएँ, भय की समस्याएँ आदि को विशेष रूपसे रेखांकित किया जा सकता है । फ्रायड जैसे मनोवैज्ञानिक का मानना था कि मनुष्य की तमाम गतिविधियाँ काम भावना द्वारा संचालित होती हैं । अतः व्यक्ति के जीवन में सेक्स का स्थान महत्वपूर्ण है । यदि काम भावना की संतुष्टि सहज, सरल, नैसर्गिक ढंगसे नहीं होती तो वह व्यक्ति सहज नहीं रह पाता है । उसमें कामजनित कुंठाओं का निर्माण होता है और इन काम-जनित कुंठाओं के कारण उसमें भिन्न भिन्न प्रकार की विकृतियाँ जन्म लेती हैं । मनोवैज्ञानिक उपन्यासो में इन कामजनित कुंठाओं का अनुसंधान उसका एक लक्ष्य रहता है । प्रस्तुत प्रबन्ध के द्वितीय अध्याय में मनोवैज्ञानिक उपन्यासों के इस सैद्धांतिक पक्ष को रखने का उपक्रम हुआ है ।

प्रस्तुत प्रबन्ध में मनोवैज्ञानिक उपन्यासों का अनुशीलन एवं अध्ययन कतिपय विशिष्ट आयामों को केन्द्र में रखकर किया गया है । उन आयोमों में से एक है मनोवैज्ञानिक क्षणों का निरूपण । जो स्थान प्रबन्ध काव्यों और महाकाव्यो में मार्मिक स्थलों की पहचान का है लगभग वही स्थिति मनोवैज्ञानिक क्षणों की मनोवैज्ञानिक उपन्यासों के संदर्भ में है । मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार इस प्रकार के क्षणों की टोहमें रहता है । उसके लिए स्थूल, बाह्य सामाजिक घटनाओं का महत्व उतना नहीं है जितना इन मनोवैज्ञानिक क्षणों का । तीसरे अध्यायमें लगभग २५-३० मनोवैज्ञानिक उपन्यासों के संदर्भ में इन मनोवैज्ञानिक

क्षणों की पड़ताल का उपक्रम है । इन उपन्यास में त्यागपत्र, सुनीता, अनामस्वामी, पानीबीच मीन पियासी, रेखा, डाकबंगला, शेखर एक जीवनी, अपने अपने अजनबी, प्रेत और छाया, नदी के द्वीप, तीसरा आदमी, अंधेरे बन्द कमरे, मछली मरी हुई, पचपन खंभे लाल दीवारें, रुकोगी नहीं राधिका ?, सूरजमुखी अंधेरे के, आप का बंटी, कृष्णकली, वे दिन, अनदेखे अनजान पुल, बेघर, आँखो की दहलीज, चित्तकोबरा, पतझड की आवाजें, रेत की मछली, सीढ़ियाँ, नावें, बँटता हुआ आदमी, प्रभृति उपन्यासों को लिया गया है । चूँकि यहाँ मनोवैज्ञानिक क्षणों को रेखांकित करने का उपक्रम है, अतः उसी उपक्रम में कहीं-कहीं उपन्यास के वस्तुतत्व का आकलन भी किया गया है । जहाँ उपन्यास के अन्य रूपबन्धों में समाज और जगत को केन्द्र में रखते हुए लेखक की एक बहिर्यात्रा दृष्टिगत होती है, वहाँ मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में लेखक की यात्रा अंतर्यात्रा का स्वरुप धारण कर लेती है । मनुष्य के चित्ततंत्र पर सदैव किसी-न-किसी प्रकार के द्वन्द्ध और मानसिक ऊहापोह चलते रहते हैं । मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में इन द्वन्द्धात्मक स्थिति को परिलक्षित करने का प्रयत्न रहता है ।

मनोवैज्ञानिक क्षणों की भाँति मनोवैज्ञानिक ग्रंथियाँ, वह दूसरा आयाम है जिसे इस प्रबन्ध में लक्षित किया गया है । चतुर्थ अध्याय में मनोवैज्ञानिक ग्रंथियों को लक्षित और परीक्षित करने का उपक्रम रहा है । यहाँ यह निर्दिष्ट किया गया है कि जहाँ जीवन की सहजता में किन्हीं कारणों से व्यवधान आता है वहाँ ग्रंथि का निर्माण होता है । अतः कहा जा सकता है कि अनैसर्गिक जीवन-प्रक्रिया ही मनोवैज्ञानिक ग्रंथियों का मूल कारण है । प्रमुख मनोवैज्ञानिक ग्रंथियों में लघुताग्रंथि, प्रभुत्व ग्रंथि, बंधत्व ग्रंथि, इलेक्ट्रा ओर इडीपस ग्रंथि, फोबिया ग्रंथि तथा कुछेक यौन ग्रंथियों को परिगणित कर सकते हैं । आत्मपीडकता और परपीडकता के आधार पर सादवादी और

मासोकवादी ग्रंथि का निर्माण होता है। लघुताग्रंथि के कारण व्यक्ति में हीनता बोध पैदा होता है तो प्रभुत्व ग्रंथि के कारण वह मिथ्याभिमानी और अहंकारी हो जाता है । इन ग्रंथियों का मूल जातिगत कुंठा, अर्थगत कुंठा और यौन कुंठाओं में देखा जा सकता है । अपनी जीवन यात्रा में किसी अनुकरणीय व्यक्ति को अपना आदर्श बनाना एक अच्छी बात है, उससे जीवनपथ सुगम और सुकर हो जाता है परन्तु उसका अतिरेक मानव जीवन और व्यवहार में असंतुलन पैदा कर सकता है । जब किसी व्यक्ति के प्रति यह अतिरेक हो जाता है तब बद्धत्व ग्रंथि का निर्माण होता है। मातृबद्धत्व, पितृबद्धत्व, अन्य व्यक्ति बद्धत्व आदि इस प्रकार की ग्रंथियाँ है । इन ग्रंथियों से भी मनुष्य का जीवन सहज नहीं रह पाता है । इडीपस ग्रंथि का निर्माण पुरुषों में होता है, तो इलेक्ट्रा ग्रंथि को निर्माण स्त्रियों में होता है । इन ग्रंथियों के कारण पुरुष माता के प्रति और स्त्री पिता के प्रति अनुदार, कटु और क्रूर हो जाती है । भय भी मनुष्य की एक आदिम प्रवृत्ति है । प्रत्येक व्यक्ति किसी-न-किसी प्राणी या परिस्थिति से डरता है; परंतु जब इसका अतिक्रमण होने लगता है और किसी खास व्यक्ति, प्राणी या वस्तु से मनुष्य भयाक्रान्त रहने लगता है, तब उसे फोबिया ग्रंथि कहते हैं । इन ग्रंथियों के अतिरिक्त बहुत-सी यौन ग्रंथियाँ भी होती हैं; जिनके कारण मनुष्य यौन-विकारों और विकृतियों का शिकार होता है । हिन्दी के पूर्व उल्लेखित मनोवैज्ञानिक उपन्यासों के संदर्भ में इन ग्रंथियों का अध्ययन और परीक्षण किया गया है । यहाँ एक तथ्य उल्लेख्य हो जाता है कि मनोवैज्ञानिक उपन्यासों के अतिरिक्त अन्य उपन्यासों में भी जहाँ ये ग्रंथियाँ दृष्टिगोचर हुई हैं वहाँ उनको भी अध्ययन क्षेत्र में समेटने का और समेकित करने का प्रयत्न किया गया है । यह आवश्यक नहीं कि अन्य रूपबन्धों में ये न हों । मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में आग्रह, मनोवैज्ञानिक प्रवृत्तियों और विश्लेषण का होने के कारण ये केन्द्र में रहती हैं । इतना ही अंतर है ।

सामान्यतौर पर सामाजिक, राजनीतिक और अन्य प्रकार के रूपबन्धों के उपन्यासों में मुख्यतः सामाजिक, पारिवारिक, आर्थिक, राजनीतिक आदि समस्याओं का निरूपण उपलब्ध होता है ; ठीक उसी प्रकार मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में मनोवैज्ञानिक समस्याओं को रखा जाता है । इसका अर्थ यह कतई नहीं कि सामाजिक-राजनीतिक उपन्यासों में मनोवैज्ञानिक समस्याएँ नहीं होतीं, मनोवैज्ञानिक समस्याएँ वहाँ भी होती है किन्तु लेखक का ध्यान अधिकांशतः सामाजिक, पारिवारिक, आर्थिक समस्याओं में ही केन्द्रित रहता है । कोई मनोवैज्ञानिक ही उन सामाजिक, पारिवारिक समस्याओं को विश्लेषित कर उनके मनोवैज्ञानिक कारणों की पड़ताल कर सकता है । ठीक ऐसे ही मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में भी अन्य प्रकार की समस्याएँ रहती हैं । किन्तु लेखक मनोवैज्ञानिक समस्याओं को ही केन्द्रस्थ रखकर चलता है । इस प्रकार ये मानवीय समस्याएँ एक-दूसरे से जुड़ी हुई होती हैं । पंचम अध्याय में मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में निरूपित इन समस्याओं को विभिन्न आयामों के अंतर्गत विश्लेषित करने का उपक्रम रहा है । यहाँ पर वैयक्तिक जीवन के संदर्भ में, पारिवारिक जीवन के संदर्भ में, जैविक स्थिति के संदर्भ में सांस्कृतिक मान्यताओं के संदर्भ में तथा यौन समस्याओं के संदर्भ में उल्लेखित मनोवैज्ञानिक समस्याओं को विश्लेषित किया गया है । मोहन राकेश द्वारा प्रणीत उपन्यास 'अंधेरे बन्द कमरें' में नीलिमा और शुक्ला दो बहनें हैं, किन्तु उनकी वैयक्तिक चेतना में अंतर है । नीलिमा जहाँ egoist है शुक्ला submissive है । नीलिमा और हरबंस के जीवन में जो मनोवैज्ञानिक समस्या उपस्थित होती है वह उसकी यह वैयक्तिक चेतना के कारण है । इसी तरह 'आप का बंटी' की शकुन; 'वे दिन' की रायना; आदि में हम मनोवैज्ञानिक समस्याओं को वैयक्तिक जीवन के संदर्भ में रेखांकित कर सकते हैं । मनोवैज्ञानिक समस्याओं को हम पारिवारिक जीवन के संदर्भ में भी विश्लेषित कर सकते हैं । औद्योगिकरण, नगरीकरण, वैश्वीकरण, भौतिकवादी चिंतन

आदि के कारण पारिवारिक संकट बढ़ रहा है । संयुक्त परिवार बिखरकर विभक्त परिवारमें तबदिल हो रहे हैं । पश्चिम में तो स्थिति एकक परिवार तक आ गई है । इस पारिवारिक विघटन ने भी अनेक मनोवैज्ञानिक समस्याओं को जन्म दिया है । नीलिमा और हरबंस, अजय और शकुन, रायना और जाक आदि के जीवन में जो दाम्पत्य जीवन की समस्या रहती हैं उसका उत्स हमें कहीं-न-कहीं पारिवारिक विघटन में मिलता है । कई बार मनोवैज्ञानिक समस्याओं के मूल में सामाजिक रीतिरिवाज भी कारणभूत होते हैं । एक विशिष्ट प्रकार की समाज व्यवस्था में लोगों की सोच एक विशेष प्रकार के साँचे में ढलने लगती है । 'त्यागपत्र' की मृणाल को जिन त्रासद स्थितियों से गुजरना पड़ता है उसका कारण समाजव्यवस्था है । 'परख' उपन्यास में कट्टो, सत्यघन और बिहारी का जो चरित्र चित्रण हुआ है उसके पीछे निश्चित रुप से कुछ मनोवैज्ञानिक समस्याएँ हैं, किन्तु यदि सूक्ष्म दृष्टि से छानबीन की जाए तो इन मनोवैज्ञानिक समस्याओं के मूल में सामाजिक व्यवस्था ही कारणभूत मिलेगी । ठीक उसी प्रकार कुछ मनोवैज्ञानिक समस्याओं के पीछे आर्थिक कारण भी होते हैं । उषा प्रियंवदा के दो उपन्यास - 'पचपन खंभे लाल दीवारें' तथा 'रुकोगी नहीं राधिका ?' की नायिकाएँ क्रमशः सुषमा और राधिका के चरित्र में जो अंतर है वह आर्थिक स्थितियों के कारण है । सुषमा जहाँ समाजभीरु है, राधिका स्वतंत्र और उन्मुक्त है ।

मनोवैज्ञानिक समस्याओं का विश्लेषण हम विशेष जैविक स्थिति के संदर्भ में भी कर सकते हैं । जैविक स्थिति से यहाँ तात्पर्य व्यक्ति की लैंगिक स्थिति से है । कोई व्यक्ति स्त्री है या पुरुष है उसके आधार पर उसकी समस्याएँ भिन्न-भिन्न प्रकार की हो सकती हैं । कई बार देखा गया है कि एक व्यक्ति जो स्त्री है और उसकी जो मनोवैज्ञानिक समस्या है, यदि वह पुरुष हो तो कदाचित उस तरह की समस्या नहीं भी हो सकती है । ठीक यही बात

पुरुष के संदर्भ में भी कही जा सकती है । जैनेन्द्रकुमार द्वारा प्रणीत उपन्यास 'त्यागपत्र' की मृणाल की जो समस्या है वह भारतीय संदर्भ में केवल नारी होने के कारण है । भारतीय परिप्रेस्य में एक नारी के विवाह-पूर्व के प्रेम-संबंधो को कभी स्वस्थ दृष्टि से देखा नहीं जाता। मृणाल के जीवन की 'त्रासदी' उसके विवाह पूर्व प्रेम संबंधो के कारण है। ठीक ऐसी स्थिति में विवाह पूर्व के पुरुष के प्रेम संबंधो को उस तरह से नहीं लिया जाता । उसे लज्जाजनक भी नहीं माना जाता । बल्कि कई बार तो उसको महिमामंडित करने की चेष्टा होती है । अभिप्राय यह कि जैविक अंतर के कारण व्यक्तियों के जीवन में भिन्न-भिन्न प्रकार की समस्याएँ होती हैं ।

देशकाल की भिन्नता के अनुसार सभ्यता और संस्कृति का निर्माण होता है । नाना प्रकार की सभ्यताओं और संस्कृतियों में उन सभ्यताओं और संस्कृतियों के अनुसार लोगो में नाना प्रकार की मान्यताएँ उपलब्ध होती हैं । ये मान्यताएँ कई बार परिवर्तित होती रही है । इन मान्याताओं के कारण कुछ मनोवैज्ञानिक समस्याएँ उत्पन्न होती है । मनुष्य के चिंतन का, उसकी सोच का बहुत कुछ आधार इन विभिन्न सांस्कृतिक मान्यताओं पर अवलंबित होता है । फलतः हमें विभिन्न प्रदेशों की मनोवैज्ञानिक समस्याएँ मिलती है । भारतीय तथा पाश्चात्य परिवेश के स्त्री-पुरुषों की समस्याओं में अंतर उनकी सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के कारण भी होता है । निर्मल वर्मा के उपन्यास 'वे दिन' की रायना जिस प्रकार उन्मुक्त और ग्रंथिरहित रहती है भारतीय परिवेश में वह प्रायः असंभव लगता है । पश्चिमी संस्कृति के कारण वह एक प्रकार से उन्मुक्त समाज में रही है, अतः जातीय जीवन को लेकर उसके मन में कोई ग्रंथि या अपराधबोध की भावना नहीं है । इसके, विपरीत भारतीय परिवेश में पली-बढ़ी लड़की यदि जातीय उन्मुक्तता की ओर यदि जाती है तो उसमें मनोवैज्ञानिक ग्रंथियाँ और अपराधबोध दृष्टिगोचर होते हैं । 'सीढ़ियाँ' उपन्यास

की नायिका मनीषी सांस्कृतिक मान्यताओं के कारण ही सुकेत से विवाह करने का साहस नहीं जुटा पाती है । मनीषी को यदि पश्चिम का परिवेश मिला होता तो सुकेत से विवाह करने में उसे किसी प्रकार की समस्या का सामना नहीं करना पड़ता । सुकेत से विवाह न करने के कारण वह कुंठित हो जाती है । ऐसा सांस्कृतिक मान्यताओं के कारण ही होता है । भारत की ही कई आदिवासी जातियों में विवाह पूर्व के प्रेम को पाप-पुण्य की दृष्टि से नहीं परखा जाता । उसे जीवन की एक सहज और स्वाभाविक प्रक्रिया के रुप में अंगीकृत किया जाता है । अतः विवाह पूर्व के प्रेम को लेकर उस समाज के स्त्री-पुरुषों में कोई हीनताबोध या अपराधबोध नहीं पाया जाता । जबकि दूसरी ओर हमारे अभिजात और श्रेष्ठ समाज में केवल इसी बात के लिए 'त्यागपत्र' की मृणाल को नारकीय यंत्रणाएँ मिलती हैं । यौन समस्याएँ भी स्त्री-पुरुष के जीवन को बहुत ही बुरी तरह से प्रभावित करती हैं । यौन समस्याओं के कारण पुरुष में नपुंसकता तो स्त्री में फ्रिजीडिटी की समस्या पायी जाती है । इस के विपरीत स्त्री-पुरुष उभय में जातीय भावना का अतिरेक भी यौन समस्याओं को निर्मित करता है । संक्षेप में मनुष्य को न केवल सामाजिक, आर्थिक समस्याओं से जुझना पडता है, बल्कि मनोवैज्ञानिक समस्याओं के कारण उसके अंतर्मन में, सदैव उहापोह चलता रहता है। मनोवैज्ञानिक समस्याएँ भी परस्पर अनुस्यूत होती हैं । कई बार मनोवैज्ञानिक समस्याओं के मूल में आर्थिक, सामाजिक, पारिवारिक, सांस्कृतिक स्थितियाँ कारणभूत होती हैं ।

कुंठारहित जीवन सहज और स्वाभाविक हाता है । मनष्य के जीवन में जब कुंठाओं का निर्माण होता है, तब वह साधारण या सहज नहीं रह पाता उसका व्यवहार abnormal होने लगता है । ये कुंठाएँ कई प्रकार की होती हैं, जैसे जातिगत कुंठा, अर्थगत कुंठा, धार्मिक या सांस्कृतिक कुंठा आदि-

आदि। जब कोई कुंठा काम भावना से जुड़ी हुई होती है तब उसे कामकुंठा कहते हैं। ये काम कुंठाएँ सभी वर्ग और अवस्थाओं के स्त्री-पुरुषों में पायी जाती है। इन कामकुंठाओं के मूलमें सामाजिक सांस्कृतिक परिवेश की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता। मनुष्य जब शिशु अवस्थामें होता है उस समय यदि वह गलत संगत में पड़ जाता है या अपने घर-परिवार में ही यदि वह कुछ ऐसा देख लेता है जो उसे नहीं देखना चाहिए तो ऐसी स्थिति में उसके बाल-मस्तिष्क में कामकुंठाओं का निर्माण होता है। अलग अलग वैतरणी, मुर्दाघर, दिल एक सादा कागज, आप का बंटी, सफेद मेमने, मछली मरी हुई प्रभृति उपन्यासो में हमें ऐसे प्रसंग प्राप्त होते हैं जिन के कारण शैशव अवस्थामें ही कुछ बच्चे कामकुंठाओं के शिकार हो जाते हैं और जिनके कारण उनके जीवन की धूरी या लक्ष्य गड़बड़ा जाता है। कई बार विशिष्ट परिस्थितियों के कारण किशोर तथा युवावस्था के स्त्री-पुरुषों में भी हमें काम-कुंठाएँ दृष्टिगत होती हैं। एक कहानी अंतहीन, सफेद मेमने, नदी फिर बह चली, कालाजल, आधागाँव, शहरमें घूमता आईना, बैसाखियों वाली इमारत, तीसरा आदमी, छाया मत छूना मन, रेखा, किस्सा नर्मदाबेन गंगूबाई आदि कई उपन्यास हैं जिनमें हम किशोरावस्था तथा युवावस्था के स्त्री पुरुषो में कामकुंठाओं को देख सकते हैं। इन कामकुंठाओं के कारण उनके जीवनमें अनेकानेक मनोवैज्ञानिक समस्याएँ पैदा होती हैं। यद्यपि इस संभावनाओं को नकारा नहीं जा सकता कि किसी विशेष परिस्थिति में पड़कर प्रौढ़ अथवा वृद्धावस्था के स्त्री-पुरुषो में काम-कुंठाओं का निर्माण हो; तथापि प्रायः देखा गया है कि अधिकांशतः उन प्रौढ़ों और वृद्धों में ये काम कुंठाएँ पायी जाती हैं जो किसी-न-किसी प्रकार से शैशवावस्था या युवावस्था में उनसे ग्रसित रहे हों। शहरमें घूमता आईना, अलग अलग वैतरणी, सूखता हुआ तालाब, आधागाँव, दिल एक सादा कागज, प्रभृति उपन्यासों में हमें ऐसे पात्र बहुतायत से मिलते हैं जिनमें प्रौढ़ावस्था या वृद्धावस्था में यौन कुंठाएँ दृष्टिगत होती हैं।

कुंठा किसी भी प्रकार की हो मनुष्य के जीवन को वह ग्रहण की तरह कलंकित और कलुषित करती है । कुंठाग्रस्त व्यक्ति को एक प्रकार से हम अस्वस्थ या बीमार ही कह सकते हैं । यौन कुंठाओं से पीड़ित व्यक्ति का जीवन नाना प्रकार की विकृतियों से भरा हुआ होता है । ऐसा विकृत मनवाला व्यक्ति यौन विकृतियों के कारण स्वयं तो दुःखी और कुंठित रहता ही है, वह अपने आसपास के वातावरण और समाज को भी कुंठित करता है ।

हम अनेक स्थानों पर रेखांकित कर चुके हैं कि उपन्यास का सम्बन्ध मानव जीवन के यथार्थ से होता है । अतः मानव जीवन को समझने के लिए उपन्यास एक कारगर स्रोत प्रमाणित होता है । मनोवैज्ञानिक उपन्यासो में भी यथार्थ तो रहता ही है । यथार्थ का स्तर यहाँ पर मानसिक या चैतसिक धरातल पर रहता है । अतः मनोवैज्ञानिक उपन्यासों का अध्ययन और अनुशीलन मानवमन की गहराइयों को समझने में सहायभूत हो सकता है । व्यक्ति के अवचेतन मन को समझना अत्यंत ही कठिन होता है । इस शास्त्र के विशेषज्ञ वैज्ञानिक भी अपने विभिन्न प्रयोगों के द्वारा उसको समझने की चेष्टा करते हैं । अपने विशेष ज्ञान के द्वारा वे उसे कुछ अधिक और बेहतर तरीके से समझ सकते हैं । परन्तु मानवमन की अबूझ, अटल गहराइयों को थाहने में वे भी पूर्णरुपेण सफल हुए हैं, ऐसा नहीं कहा जा सकता । ऐसी स्थिति में मनोवैज्ञानिक उपन्यासों के द्वारा हम मनुष्य को मनुष्य के स्वभाव को, उसके अचेतन मन को, कुछ अंशों तक समझ सकते हैं । अतः मनोवैज्ञानिक उपन्यास का प्रत्येक पाठ हमें कुछ नया देता है । कदाचित इसीलिए कहा गया है कि मनोवैज्ञानिक उपन्यास एक बार नहीं, अपितु बार-बार पढ़ने की वस्तु है ।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में हमने मनोवैज्ञानिक उपन्यासों का अध्ययन उनके नाना आयामों और परिप्रेक्ष्यों में करने का एक प्रामाणिक प्रयत्न किया है ।

हमारे ज्ञान, अध्ययन और अनुशीलन की सीमाएँ हो सकती है तथापि हमारा यह अध्ययन यदि भविष्यत अनुसंधान-कर्ताओं को किंचित् मात्र भी सहायभूत हो सका तो हम अपने इस सारस्वत प्रयत्न को सार्थक समझेंगे । इस शोध-प्रबन्ध में मनोवैज्ञानिक उपन्यासों के संदर्भ में जो विभिन्न आयाम और परिप्रेक्ष्य समेकित किए गये हैं उनमें से प्रत्येक को स्वतंत्र रुप से लेकर अध्ययन किया जा सकता है । विभिन्न मनोवैज्ञानिक उपन्यासकारों तथा उनके कृतित्व को लेकर तुलनात्मक प्रकार का अध्ययन भी किया जा सकता है । अपने ज्ञान की सीमाओं तथा व्यक्तिगत अक्षमताओं से मैं भलीभाँति परिचित हूँ अतः यदि मेरे इस शोध कार्य में कुछ क्षतियाँ रह गई हों तो उसके लिए मैं क्षमाप्रार्थी हूँ । शोध अनुसंधान के क्षेत्र में यह तो अभी प्रथम सोपान है । मैं उस परमशक्ति के सम्मुख प्रार्थित हूँ कि इस दिशा में आगे अग्रसरित होकर कुछ अधिक सार्थक कर सकूँ ।

✻ ✻ ✻ ✻

:: संदर्भिका ::

परिशिष्ट : एक : उपजीव्य-ग्रंथो की सूची :

१. अनामस्वामी : जैनेन्द्रकुमार : पूर्वोदय प्रकाशन : दिल्ली ।

२. अपने अपने अजनबी : अज्ञेय : भारतीय ज्ञानपीठ : दिल्ली ।

३. अन्धेरे बन्द कमरे : मोहन राकेश : राजकमल प्रकाशन : दिल्ली ।

४. अनदेखे अनजान पुल : राजेन्द्र यादव : राजकमल प्रकाशन : दिल्ली ।

५. आपका बण्टी : मन्नू भण्डारी : अक्षर प्रकाशन : दिल्ली ।

६. कोहरे : दीप्ति खंडेलवाल : राजपाल : दिल्ली ।

७. कृष्णकली : शिवानी : भारतीय ज्ञानपीठ : दिल्ली ।

८. आंखों की दहलीज : मेहरुन्निसा परवेज़

९. चित्तकोबरा : मृदुला गर्ग : नेशनल पब्लिशिंग : दिल्ली ।

१०. डाक बंगला : कमलेश्वर : राजपाल एण्ड सन्स : दिल्ली ।

११. त्यागपत्र : जैनेन्द्र : पूर्वोदय प्रकाशन : दिल्ली ।

१२. तत्सम : राजी सेठ : राजकमल : दिल्ली ।

१३. तीसरा आदमी : कमलेश्वर : राजपाल एण्ड सन्स : दिल्ली ।

१४. नदी के द्वीप : अज्ञेय : सरस्वती प्रेस : वाराणसी ।

१५. नावें : शषिप्रभा शास्त्री : राजकमल : दिल्ली ।

१६. परख : जैनेन्द्र : पूर्वोदय प्रकाशन : दिल्ली ।

१७. पचपन खंभे लाल दीवारें : उषा प्रियंवदा : राजकमल : दिल्ली ।

१८. पतझड़ की आवाजें : निरूपमा सेवती : इन्द्रप्रस्थ प्रकाशन : दिल्ली ।

१९. पानी बीच मीन पियासी : राधवेन्द्र मिश्र :

२०. प्रेत और छाया : इलाचन्द्र जोशी :

२१. बंटता हुआ आदमी : निरूपमा सेवती : नेशनल पब्लिशिंग : दिल्ली ।

२२. बेघर : ममता कालिया : रचना प्रकाशन : इलाहाबाद ।

२३. मछली मरी हुई : राजकमल चौधरी : राजकमल प्रकाशन : दिल्ली ।

२४. मुक्तिबोध : जैनेन्द्र : पूर्वोदय प्रकाशन : दिल्ली ।

२५. रूकोगी नहीं राधिका : उषा प्रियंवदा : अक्षर प्रकाशन : दिल्ली ।

२६. रेखा : भगवतीचरण वर्मा : राजकमल : दिल्ली ।

२७. रेत की मछली : कान्ता भारती : लोकभारती प्रकाशन : इलाहाबाद ।

२८. वे दिन : निर्मल वर्मा : राजकमल : दिल्ली ।

२९. शेखर : एक जीवनी : अज्ञेय : सरस्वती प्रेस : वाराणसी ।

३०. सूरजमुखी अंधेरे के : कृष्णा सोबती : राजकमल : दिल्ली ।

३१. सुनीता : जैनेन्द्र : पूर्वोदय प्रकाशन : दिल्ली ।

३२. सीढ़ियां : शषिप्रभा शास्त्री : नेशनल पब्लिशिंग : दिल्ली ।

परिशिष्ट : दो : सहायक ग्रंथ सूची : हिन्दी :

१. अलग अलग वैतरणी : उपन्यास : डा. शिवप्रसाद सिंह : लोकभारती प्रकाशनः इलाहाबाद ।

२. अज्ञेय और आधुनिक रचना की समस्या : डा. रामस्वरूप चतुर्वेदी : भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन : वाराणसी ।

३. अधूरे साक्षात्कार : डा. नेमिचन्द्र जैन : अक्षर प्रकाशन : दिल्ली ।

४. अज्ञेय का कथा साहित्य : डा. ओम प्रभाकर : नेशनल पब्लिशिंग : दिल्ली ।

५. आधुनिक हिन्दी कथा-साहित्य और मनोविज्ञान : डा. देवराज उपाध्याय : साहित्य भवन प्रा. लि. : इलाहाबाद ।

६. आधुनिक लेखिकाओं के नगरीय परिवेश के उपन्यास : डा. पारूकान्त देसाई : चिंतन प्रकाशन : कानपुर ।

७. आज का हिन्दी साहित्य - संवेदना और दृष्टि : डा. रामदरश मिश्र : अभनव प्रकाशन : दिल्ली ।

८. आधुनिकता के संदर्भ में आज का हिन्दी उपन्यास : डा. अतुलवीर अरोड़ा : पब्लिकेशन ब्यूरो : चंडीगढ़ ।

९. आज के लोकप्रिय कवि : भवानीप्रसाद मिश्र : राजपाल : दिल्ली ।

१०. एक इंच मुस्कान : राजेन्द्र यादव, मन्नू भंण्डारी : सहलेखन-उपन्यास : राजपाल एण्ड सन्स : दिल्ली ।

११. एक कहानी अन्तहीन : हृदयेश : राधाकृष्ण प्रकाशन : दिल्ली ।

१२. एक टूटा हुआ आदमी : जवाहर सिंह : हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय :

१३. उन्माद : डा. भगवानसिंह : राजकमल : दिल्ली ।

१४. कलम का सिपाही : अमृतराय : हंस प्रकाशन : इलाहाबाद ।

१५. कथोपकथन : गुजराती : सुरेश जोशी : आर. आर. शेठनी कंपनी : मुंबई ।

१६. काव्य के रूप : डा. गुलाबराय : आत्माराम एण्ड सन्स : दिल्ली ।

१७. कामसूत्रम् : हिन्दी व्याख्याकार : श्री देवदत्त शास्त्री : चौराम्बा संस्कृत सीरिज : वाराणसी ।

१८. काला जल : उपन्यास : गुलशेरखान शानी : विद्याप्रकाशन मंदिर : दिल्ली ।

१९. किस्सा नर्मदाबेन गंगूबाई : शेलेश मटियानी : आत्माराम एण्ड सन्स : दिल्ली ।

२०. कृष्णकली : शिवानी : भारतीय ज्ञानपीठ : दिल्ली ।

२१. चिन्तनिका : डा. पारूकान्त देसाई : सूर्य प्रकाशन : दिल्ली ।

२२. टेराकोटा : उपन्यास : लक्ष्मीकान्त वर्मा : भारतीय ज्ञानपीठ : दिल्ली ।

२३. दाम्पत्य-रहस्य : डा. हरकिशनदास गांधी : हरिहर पुस्तकालय : सूरत ।

२४. दो लड़कियां : उपन्यास : रजनी पनिकर : पिताम्बर बुक डिपो : दिल्ली ।

२५. धरती धन न अपना : उपन्यास : जगदीशचन्द्र : राजकमल : दिल्ली ।

२६. नाट्यशास्त्र का पारिभाषिक संदर्भकोश : डा. ब्रजवल्लभ मिश्र : सिद्धार्थ पब्लिकेशनः नयी दिल्ली ।

२७. नये प्रतिमान - पुराने निकष : लक्ष्मीकान्त वर्मा : भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन : दिल्ली ।

२८. नाच्यौ बहुत गोपाल : उपन्यास : अमृतलाल नागर : राजपाल एण्ड सन्स : दिल्ली ।

२९. प्रेमचन्द और उनका युग : डा. रामविलास शर्मा : राजकमल : दिल्ली ।

३०. प्रेमचन्द और गोर्की : संपादक - डा. शचिरानी गुर्टू : राजकमल : दिल्ली ।

३१. प्रेमचन्द - एक कृती व्यक्तित्व : जैनेन्द्रकुमार : पूर्वोदय प्रकाशन : दिल्ली ।

३२. प्रेमचन्दोत्तर उपन्यासों की शिल्पविधि : डा. सत्यपाल चुघ : सरस्वती पुस्तक सदन : आगरा ।

३३. बिजली के फूल : काव्य : डा. पारूकान्द देसाई : रोमा प्रकाशन : बड़ौदा ।

३४. भारतीय नवलकथा : गुजराती : डा. रमणलाल जोशी : ग्रंथ निर्माण बोर्ड : अमदावाद ।

३५. भरतीय सामाजिक समस्याएं : डा. एम. एल. गुप्ता : साहित्य भवन : आगरा ।

३६. मन्नू भंडारी के कथा-साहित्य का मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन : डा. ममता शुक्ला : चिंतन प्रकाशन : दिल्ली ।

३७. मुझे चांद चाहिए : उपन्यास : डा. सुरेन्द्र वर्मा : राजकमल : दिल्ली ।

३८. मित्रो मरजानी : उपन्यास : कृष्णा सोबती : राजकमल : दिल्ली ।

३९. युगनिर्माता प्रेमचन्द तथा कुछ अन्य निबंध : डा. पारूकान्त देसाई : रोमा प्रकाशन : बड़ौदा ।

४०. यथार्थवाद : डा. शिवकुमार मिश्र : मैकमिलन कंपनी : दिल्ली ।

४१. संस्कृति के चार अध्याय : डा. रामधारी सिंह दिनकर : लोकभारती प्रकाशन : इलाहाबाद ।

४२. समीक्षायण : डा. पारूकान्त देसाई : सूर्यप्रकाशन : दिल्ली ।

४३. साठोत्तरी हिन्दी उपन्यास : डा. पारूकान्त देसाई : सूर्यप्रकाशन : दिल्ली ।

४४. हिन्दी उपन्यासों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन : डा. एम. वेंकटेश्वर : अन्नपूर्णा प्रकाशन : कानपुर ।

५५. हिन्दी उपन्यासोंमें रूढ़िमुक्त नारी : डा. राजरानी शर्मा : साहित्य मंडल : नयी दिल्ली ।

४६. हिन्दी उपन्यासों में कामकाजी महिला : डा. रोहिणी अग्रवाल : दिनमान प्रकाशनः दिल्ली ।

४७. हिन्दी उपन्यास साहित्य की विकास परंपरा में साठोत्तरी उपन्यास : डा. पारूकान्त देसाई : चिंतन प्रकाशन : कानपुर ।

४८. हिन्दी उन्यास पर पाश्चात्य प्रभाव : डा. भारतभूषण अग्रवाल : ऋषभचरण जैन एण्ड संतति : दिल्ली ।

४९. हिन्दी उपन्यास : संपादक : डा. सुषमा प्रियदर्शिनी : राधाकृष्ण प्रकाशन : दिल्ली ।

५०. हिन्दी उपन्यास : एक अन्तर्यात्रा : डा. रामदरश मिश्र : राजकमल : दिल्ली ।

५१. हिन्दी उपन्यास साहित्य का अध्ययन : डा. एस. ए. गणेशन : राजपाल एण्ड सन्सः दिल्ली ।

५२. हिन्दी साहित्य : एक आधुनिक परिदृश्य : अज्ञेय : भारतीय ज्ञानपीठ : दिल्ली ।

५३. हिन्दी साहित्य का इतिहास : डा. नगेन्द्र : नेशनल पब्लिशिंग : दिल्ली ।

५४. हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त सुगम इतिहास : डा. पारूकान्त देसाई : कृष्णा प्रकाशनः जयपुर ।

५५. हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यास : डा. धनराज मानधाने : ग्रंथम : कानपुर ।

५६. हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद : डा. त्रिभुवनसिंह : हिन्दी प्रचारक : वाराणसी ।

परिशिष्ट : तीन : सहायक ग्रन्थों की सूची : अंग्रेजी :

१. आस्पेक्ट्स आफ द नोवेल : ई. एम. फारस्टर : ए पेनग्विन इण्टरनेशनल ।

२. एन ए. बी. झेड. आफ लव : इंगे एण्ड स्टेन हेलर : नेविल स्पिअरमेन : लंडन ।

३. ए ट्रिटाइज आन द नोवेल : राबर्ट लिडले : जोनाथन केप : लंडन ।

४. ए नोवेलिस्ट आन नोवेल्स : ज्योर्ज डबल्यू : कालिन्स एण्ड कंपनी : लंडन ।

५. एन इन्ट्रोडक्शन टु द स्टडी आफ लिटरेचर : हडसन : लंडन ।

६. अर्बन सोसायटी इन इण्डिया : डा. आशिष बोज : वर्ल्ड प्रेस कलकत्ता ।

७. इण्डियन वुमन : डा. हंसा मेहता : बुटाला एण्ड कंपनी : दिल्ली ।

८. इडियन विमेन्स बेटल फार फ्रीडम : कमलादेवी चट्टोपाध्याय : अभिनव पब्लिकेशनः दिल्ली ।

९. एटिट्युड आफ दिमेन टु पार्ट टाइम एम्प्लोयमेण्ट : रामचन्द्रन : टाटा इन्स्टीट्युट आफ सोशल आइन्स : मुंबई ।

१०. द सेक्स लाइफ फाइल : एस. जे. तुफिल : फॉरम पब्लिकेशन ।

११. जनरल नालेज-१९९९ : एस. के. सचदेव : सुधा पब्लिकेशन : न्यू दिल्ली ।

१२. द लाइफ एण्ड वर्क आफ प्रेमचन्द : मनोहर बंदोपाध्याय : पब्लिकेशन डिविजनः गर्वमेण्ट आफ इण्डिया : दिल्ली ।

१३. द राइजु आफ द नोवेल : इवान वाट : केलिफार्निया प्रेस ।

१४. द नोवेल एण्ड द पिपुल : राल्फ फाक्स : मोस्को ।

१५. द वुमन्स मूवमेण्ट : बार्बरा डेकार्ड : न्यूयोर्क ।

१६. द सायकोलोजिकल नावेल : लियान एडले : लंडन ।

१७. द क्राफ्ट आफ फिक्शन : पर्सी ल्युबाक : जोनाथन केप : लंडन ।

परिशिष्ट : चार : पत्र-पत्रिकाएं :

१. आलोचना : दिल्ली
२. एतद : गुजराती पत्रिका : बड़ौदा
३. टाइम्स आफ इण्डिया : अंग्रेजी दैनिक : अहमदाबाद
४. तादर्थ्य : गुजराती पत्रिका : अहमदाबाद
५. धर्मयुग : बम्बई
६. प्रकर : दिल्ली
७. परब : गुजराती पत्रिका : अहमदाबाद
८. बहुवचन : दिल्ली
९. नवभारत टाइम्स : हिन्दी दैनिक : मुंबई
१०. भाषा-सेतु : अहमदाबाद
११. संदेश : गुजराती दैनिक : बड़ौदा
१२. समय-चेतना : दिल्ली
१३. संचेतना : दिल्ली
१४. वीणा : उज्जैन
१५. वसुधा : भोपाल
१६. हंस : दिल्ली
१७. क्षितिज : गुजराती पत्रिका : नवलकथा विशेषांक
१८. फेमिना : अंग्रेजी पत्रिका

महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय की पी-एच.डी. (हिन्दी) उपाधि [illegible]

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध की सार-संक्षेपिका

HANSA MEHTA LIBRARY
The M. S. University of Baroda

:: विषय ::

"हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में मनोवैज्ञानिक क्षण, ग्रंथियों, समस्याओं एवं काम-कुंठाओं का चित्रण"

:: अनुसंधित्सु ::

श्रीमती मनीषा केतनकुमार ठक्कर

शोध-छात्रा, हिन्दी विभाग,

म. स. विश्वविद्यालय, बड़ौदा.

:: निर्देशक ::

डॉ. भगवानदास कहार

रीडर, हिन्दी विभाग,

म. स. विश्वविद्यालय, बड़ौदा.

F.W.CS

(Guide)

F.W.CS.

A. M. Dalal 17/8/02

Head
Department of Hindi
Faculty of Arts
M.S. University of Baroda,
BARODA

हिन्दी विभाग, कला संकाय,

महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, बड़ौदा, गुजरात

सन् २००२ ई.

महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय की पी-एच.डी. (हिन्दी) उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध प्रबन्ध की सार-संक्षेपिका

हमारे यहाँ कहा गया है - ''काव्य शास्त्र विनोदेन कालोगच्छति धीमताम् ।'' अर्थात् काव्य और शास्त्र द्वारा प्राप्त विनोद या आनंद में यह जीवन सुरुचिपूर्ण ढंग से व्यतीत हो जाता है । शास्त्रज्ञान की परिगणना काव्य हेतुओं में होती है । प्रतिभा के बाद व्युत्पत्ति को काव्य का हेतु माना गया है । व्युत्पत्ति के अंतर्गत काव्येतर सभी प्रकार के शास्त्रों को अंतर्निहित कर लिया जाता हैं । यहाँ यह स्पष्ट कर देना अत्यावश्यक है कि भारतीय परंपरा में काव्य और साहित्य एक दूसरे के पर्यायवाची है । जिस कवि या साहित्यकार का शास्त्रज्ञान विपुल और समृद्ध होगा उसके काव्य में उतनी अधिक प्रौढता दृष्टिगत होगी । गोस्वामी तुलसीदास विरचित 'रामचरित मानस' भारतीय जनता, विशेषत: उत्तर भारतीय जनता के, कंठ का शृंगार इसीलिए तो है कि वह 'नाना पुराण निगमागम सम्मत' है । अत: सुसंस्कृत एवं सुशिक्षित व्यक्ति के लिए साहित्य और शास्त्र उभय का ज्ञान आवश्यक है । जिन्होंने इन दोनों का अध्ययन किया है उनका भाग्य तो सर्वोपरि है । जिन्होंने शास्त्र नहीं पढ़ा, केवल साहित्य पढ़ा है वे थोड़े कम भाग्यशाली है । किन्तु जिन्होंने शास्त्र पढ़ा है पर साहित्य नहीं पढ़ा उनका भाग्य तो मंदातिमंद है । इस अर्थ में मैं स्वयं को भाग्यशाली समझती हूँ, क्योंकि प्रारंभ से ही साहित्य के पठन-पाठन में मेरी विशेष अभिरूचि रही है । प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा के वर्षों में अन्य शास्त्रगामी विषयों की तुलना में भाषा साहित्य के विषयों में मेरी रूझान कुछ अधिक थी । गुजराती, हिन्दी, संस्कृत, अंग्रेजी पढ़ने में विशेष आनंदानुभूति होती थी । अत: हाईस्कूल के उपरान्त उच्चतर शिक्षा हेतु मैंने कला या विनयन में प्रवेश लेना ही अधिक उचित समझा । भाषा साहित्य के विषयों में भी मेरी अभिरूचि हिन्दी साहित्य के प्रति कुछ अधिक थी । अत: बी.ए. तथा एम.ए. में मुख्य विषय के रूप में मैंने हिन्दी का ही वरण किया था । उसमें भी कथा साहित्य की ओर शुरू से ही लगाव था । चित्रलेखा तथा दिव्या जैसे उपन्यासों के कारण उपन्यास साहित्य की ओर मेरा ध्यान गया और प्रेमचंन्द, जैनेन्द्र,

अज्ञेय, यशपाल, रेणु, कमलेश्वर, प्रभृति उपन्यासकारों के कतिपय उपन्यासों को मैंने शौकिया तौर पर पढ़ा। बी.ए. और एम.ए. ये दोनों उपाधियाँ उत्तर गुजरात युनिवर्सिटी से हासिल की है। सन् 1994 में मेरा विवाह हुआ और मैं बड़ौदा आ गई। विवाह के उपरान्त मेरे मन में आगे पढ़ने और बढ़ने की विशेष लगन थी। मैंने अपनी यह ईच्छा उत्तर गुजरात युनिवर्सिटी के हिन्दी के वरिष्ठ प्राध्यापक और मेरे आदरणीय गुरू डॉ. हरीश शुक्ल के सम्मुख प्रस्तुत की। उन्होंने मुझे प्रोत्साहित करते हुए सुझाया कि मैं बड़ौदा में महाराजा सयाजीराव युनिवर्सिटी के हिन्दी विभाग से पी.एच.डी. हेतु अनुसंधान कार्य कर सकती हूँ। उन्होंने हिन्दी विभाग के दो-तीन वरिष्ठ प्राध्यापकों के नाम सुझाए। यह सन् 1998 की बात है। उस समय डॉ. पारूकान्त देसाई हिन्दी विभाग के अंतर्गत प्रोफे सर एवं अध्यक्ष के रूप में थे। महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय में पी.एच.डी. पंजीयन में जो नियम है उनके कारण वे मुझे अपने अंतर्गत नहीं रख सकते थे। अत: उन्होंने अपने विभाग के दो-तीन वरिष्ठ पी.एच.डी. मार्गदर्शकों के नाम सुचित किए। इसी उपक्रम में मैं डॉ. भगवानदास कहार साहब से परिचित हुई। उन्होंने हिन्दी की सर्वोच्च उपाधि, डी.लीट की उपाधि प्राप्त की है। अत: मैंने निर्धार किया कि उनके मार्गदर्शन में ही मैं अपना अनुसंधान कार्य करूँगी। अत: मैं उन्हें तीन-चार बार इस संदर्भ में मिली और शोध अनुसंधान की अपनी इच्छा उनके सम्मुख रखी। डॉ. हरीश शुक्ल साहब का हवाला भी दिया। अन्तत: वे उनके अंतर्गत मेरे पंजीकरण के लिए राजी हुए। विषय चयन हेतु और तीन-चार बार उनसे भेंट की। हाईस्कूल के दिनों में मनोविज्ञान भी मेरा एक विषय था और उपन्यास साहित्य के प्रति एक विशेष आकर्षण तो था ही अत: डॉ. साहब ने मुझे उपन्यास और मनोविज्ञान के संदर्भ में शोध अनुसंधान करने का सुझाव दिया और खूब सोच-विचार, चिंतन-मनन के पश्चात् यह विषय प्रस्तावित किया - ''हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में मनोवैज्ञानिक क्षण, ग्रंथियों, समस्याओं एवं कामकुंठाओं का चित्रण।''

शोधविषय के निश्चित हो जाने पर उन्होंने मुझे शोध प्रक्रिया और शोध प्रविधि के संदर्भ में उचित मार्गदर्शन दिया । शोध प्रबंध के विभिन्न अंगो, जैसे प्राक्कथन, संदर्भानुक्रम, सहायक ग्रंथ सूचि (Bibliography) आदि के विषय में उदाहरण सहित विशद् चर्चा करते हुए प्रबन्ध में उनकी उपादेयता के संदर्भ में मुझे सही समझ और जानकारी प्रदान की । पाद-टिप्पणी या संदर्भ किस तरह संकेतित करते हैं उसकी विधि के संदर्भ में बताया । उसमे पश्चात् कुछ प्रकाशित शोध प्रबन्धों को सामने रख कर उक्त विषय की जानकारी दी । ऐसे शोध प्रबन्धों में डॉ. भारत भूषण अग्रवाल का शोध प्रबन्ध ''हिन्दी उपन्यासों पर पाश्चात्य प्रभाव'', डॉ. एस.एन. गणेशन का शोध प्रबन्ध ''हिन्दी उपन्यास साहित्य का अध्ययन'', डॉ. किशोरसिंह का शोध प्रबन्ध ''हिन्दी उपन्यास में व्यंग्य'', डॉ. धनराज मानने का शोध प्रबन्ध ''हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यास'' प्रभृति का में विशेषत: उल्लेख करना चाहूँगी । इनके अतिरिक्त शोधप्रक्रि या तथा शोध अनुसंधान के संदर्भ में डॉ. नगेन्द्र, डॉ. उदयभानुसिंह, डॉ. रवीन्द्रसिंह श्रीवास्तव, डॉ. राजुरकर, म.म. पंडित के.का. शास्त्री आदि विद्वानों के एतद विषयक ग्रंथों को देख जाने का परामर्श उन्होंने दिया । इतना ही नहीं उन ग्रंथों को उपलब्ध कराने में भी मेरी पर्याप्त सहायता की ।

इतनी पूर्व तैयारी के पश्चात् उक्त विषय को लेकर मेरे नाम का पंजीकरण दिनांक २३.८.९९ को हो गया । उसके बाद सामग्री चयन संचयन, अध्ययन, अनुशीलन, विश्लेषण की प्रक्रिया का प्रारंभ हुआ । जैसे-जैसे मैं इस दिशा में अग्रसरित होती गई वैसे-वैसे अनुसंधान और अध्ययन के नये क्षितिज उदघाटित होते गये । अध्ययन की सुविधा तथा शोध प्रबन्ध की सुनिश्चित नियोजना हेतु प्रस्तुत शोध प्रबन्ध को मैंने निम्न लिखित सात अध्यायों में विभक्त किया है :-

१) विषय प्रवेश

२) मनोवैज्ञानिक उपन्यास : सैद्धान्तिक निरुपण ।

३) हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में मनोवैज्ञानिक क्षणों का निरुपण ।

४) हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में मनौवैज्ञानिक ग्रंथियों का निरुपण ।

५) हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में मनोवैज्ञानिक समस्याओं का निरुपण ।

६) हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में मनोवैज्ञानिक काम-कुंठाओं का निरुपण ।

७) उपसंहार ।

प्रथम अध्याय 'विषय प्रवेश' का है । इसमें उपन्यास शब्द की व्याख्या, पश्चिम में उपन्यास का विकास, पश्चिम में मनोवैज्ञानिक उपन्यासों का सूत्रपात, हिन्दी उपन्यास का उद्‌भव और विकास जैसे मुद्दों का आकलन करते हुए हिन्दी उपन्यास के विकास क्रम में प्रेमचंद पूर्वकालीन प्रेमचंद कालीन तथा प्रेमचन्दोत्तर कालीन औपन्यासिक प्रवृत्तियों का ब्यौरा दिया गया है। प्रेमचंदोत्तर कालीन, औपन्यासिक प्रवृत्तियों का विस्तृत विवेचन करते हुए उसमें सामाजिक उपन्यास, ऐतिहासिक उपन्यास, मनोवैज्ञानिक उपन्यास, समाजवादी उपन्यास आँचलित उपन्यास, राजनीतिक उपन्यास, व्यंग्यात्मक उपन्यास, पौराणिक उपन्यास, साठोत्तरी उपन्यास, तथा समकालीन उपन्यास जैसी लगभग ग्यारह औपन्यासिक प्रवृत्तियों का दिग्दर्शन करवाया गया है । इन औपन्यासिक प्रवृत्तियों की विशद् और व्यतिरेकी चर्चा के उपरांत मनोवैज्ञानिक उपन्यासों के रूपबन्ध को स्पष्ट करने का उपक्रम रखा गया है । यहाँ मनोवैज्ञानिक उपन्यासों को परिभाषित करते हुए उसके प्रमुख आयामों को रेखांकित किया गया है । मनोवैज्ञानिक उपन्यासों की संरचना को स्पष्ट करते हुए मनोवैज्ञानिक उपन्यासों की सृष्टि के कारणों की तार्किक और अनुसंधान परक विवेचना की गई है । मनोवैज्ञानिक उपन्यासों के निर्माण में वैयक्तिक यथार्थ की पहचान, मनोवैज्ञानिक अनुसंधान, नारी व्यक्तित्व की पहचान, पुरुष का आहत अभिमान, अति बौद्धिकता, नगरीकरण की प्रक्रिया, भौतिकता की अंधी-दौड़, पारिवारिक विघटन जैसे कारणों की यहाँ विशेषत: चर्चा हुई है । अध्याय के अंत में उन मनोवैज्ञानिक उपन्यासों का विशेषत: उल्लेख किया गया है, जिनको इस प्रबन्ध में आधारभूत या उपजीव्य उपन्यासों के रूप में अंगीकृत किया गया है ।

दूसरे अध्याय में मनोवैज्ञानिक उपन्यासों के सैद्धांतिक पक्ष को रखा गया है । यहाँ पर मनोवैज्ञानिक क्षण Id(इद), ego(इगो), मनोवैज्ञानिक ग्रंथियाँ, लघुता ग्रंथि, लघुता ग्रंथि के कारण प्रभुत्व ग्रंथि, बद्धत्व ग्रंथि, इडीपस और इलेक्ट्रा कोम्प्लेक्स, सादवादी ग्रंथि, माशोकवादी ग्रंथि, सेक्स्युअल परवर्जन की ग्रंथि, फ्रीजीडीटी कोम्प्लेक्ष, निम्फोमेनिया, फोबीया कोम्प्लेक्ष, आदि मनोवैज्ञानिक संकल्पनाओं को औपन्यासिक उदाहरणों के साथ समझाया गया है । इसी अध्याय के अंतर्गत मनोवैज्ञानिक समस्याओं को परिभाषित करने की चेष्टा हुई है । मनोवैज्ञानिक समस्याओं के अंतर्गत शिशु-मनोविज्ञान की समस्या, पति-पत्नी के बीच तनाव की समस्या, काम (Sex) की समस्या, अहम् (ego) की समस्या, भय की समस्या जैसी विभिन्न मनोवैज्ञानिक समस्याओं की चर्चा औपन्यासिक उदाहरणों के साथ की गई है । प्रस्तुत प्रबन्ध में मनोवैज्ञानिक क्षण, ग्रंथियों और समस्याओं के अतिरिक्त काम-कुंठाओं को भी विशेषत: विश्लेषित करने का उपक्रम है । अत: प्रस्तुत अध्याय में ही कामजनित कुंठाओं को भी विश्लेषित किया गया है । कामजनिक कुंठाओं के अंतर्गत अप्राकृतिक काम-वृत्तियाँ, कामेच्छा की विपुलता, समलैंगिक काम भावना, गुदामार्गीय मैथुन, पशु मैथुन, मुख मैथुन, हस्त मैथुन, पीड़ा द्वारा काम संतुष्टि, ढीर्रीीरींळीा आदि आदि कामजनित कुंठाओं को विश्लेषित किया गया है ।

तीसरा अध्याय हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में मनोवैज्ञानिक क्षणों के निरुपण के संदर्भ में है । प्रास्ताविक में बहुत संक्षेप में मनोवैज्ञानिक क्षण को परिभाषित किया गया है । तदनन्तर त्यागपत्र, सुनीता, अनामस्वामी, परख, मुक्तिबोध, पानी बीच मीन पियासी, प्रेत और छाया, शेखर एक जीवनी, अपने अपने अज़नबी, नदी के द्वीप, रेखा, डाक बंगला, तीसरा आदमी, अंधेरे बन्द कमरे, मछली मरी हुई, पचपन खंभे लाल दीवारें, सूरजमुखी अंधेरे के, आप का बंटी, कृष्णकली, वे दिन, अनदेखे अनजान पुल, बेघर, आँखों की दहलीज़, चित्तकोबरा, पतझड़ की आवाजें, सीढ़याँ, नावें, तत्सम्, बँटता हुआ आदमी, रेत की मछली, कोहरे जैसे लगभग २५-

३० मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में निरुपित मनोवैज्ञानिक क्षणों के उदाहरणों को प्रस्तुत किया गया है । बिना कथावस्तु की पृष्ठभूमि के मनोवैज्ञानिक क्षणों को समझाना कठिन ही नहीं बल्बि असंभव होता है, इसीलिए प्रस्तुत अध्याय में मनोवैज्ञानिक क्षणों के संदर्भ में उनके वस्तु और प्रसंगों को संक्षेप में रखा गया है ।

चतुर्थ अध्याय में उपजीव्य मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में मनोवैज्ञानिक ग्रंथियों का निरुपण कहाँ-कहाँ और किस-किस तरह से हुआ है उसकी विस्तृत चर्चा उपन्यासों में निरुपित उदाहरणों के साथ की गई है । ऐसी मनोवैज्ञानिक ग्रंथियों में लघुता ग्रंथि, प्रभुत्व ग्रंथि, बद्धत्व ग्रंथि, इलेक्ट्रा और इडीपस ग्रंथि, सादवादी और मासोकवादी ग्रंथि, फोबिया ग्रंथि, यौन ग्रंथियाँ आदि को उद्घाटित किया गया है ।

पंचम अध्याय में स्पष्ट किया गया है कि मानव जीवन में सामाजिक, पारिवारिक, आर्थिक आदि समस्याएँ ही नहीं होती, परंतु मनोवैज्ञानिक समस्याएँ भी होती हैं । यहाँ यह भी ज्ञापित किया गया है कि ये मनोवैज्ञानिक समस्याएँ अन्य प्रकार की समस्याओं से अनुस्युत होती हैं । ये परस्पर संलग्नित होती हैं । अत: प्रस्तुत अध्याय में मनोवैज्ञानिक समस्याओं का अध्ययन भिन्न-भिन्न परिप्रेक्ष्य में किया गया है, जिन में निम्नलिखित मुख्य है :- वैयक्तिक जीवन के संदर्भ में, पारिवारिक जीवन के संदर्भ में, सामाजिक जीवन के संदर्भ में, आर्थिक पक्ष के संदर्भ में, जैविक स्थिति के संदर्भ में तथा सांस्कृतिक मान्यताओं के संदर्भ में - इन विभिन्न संदर्भों में मनोवैज्ञानिक समस्याओं का क्या स्वरूप हो सकता है उसका विशद् और सोदाहरण विश्लेषण यहाँ प्रस्तुत किया गया है । बहुत-सी मनोवैज्ञानिक समस्याओं के मूल में यौन जीवन से जुड़ी हुई घटनाएँ रहती हैं । अत: इसी अध्याय के अंतर्गत ही यौन समस्याओं को भी विश्लेषित किया गया है ।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में विशेषत: चार मुद्दों की पड़ताल की गई है । इन चार मुद्दों में मनोवैज्ञानिक क्षण, मनोवैज्ञानिक ग्रंथियाँ, मनोवैज्ञानिक समस्याएँ तथा

काम-कुंठाओं के चित्रण को समाविष्ट किया गया है । अत: छठे अध्याय में जिन कामजनित कुंठाओं को लिया गया है उनका उल्लेखनीय द्वितीय अध्याय के सैद्धांतिक निरुपण में किया गया है । अत: यहाँ उनका पुनरावर्तन करना उपयुक्त न होगा । द्वितीय अध्याय में उसके सिद्धांत पक्ष को संक्षेप में रखा गया है । यहाँ उन-उन कामजनित कुंठाओं का विश्लेषण विभिन्न उपन्यासों में वर्णित प्रसंगों के आधार पर हुआ है ।

सप्तम् अध्याय उपसंहार का है । इसमें प्रबन्ध के समग्रावलोकन से विश्लेषण के आधार पर कुछ निष्कर्षों को प्रस्तुत किया गया है । संक्षेप में समग्र शोध प्रबन्ध के सार संक्षेप या निचोड़ को प्रस्तुत करने का यहाँ उपक्रम रहा है । यहाँ प्रबन्ध की उपादेयता और उपलब्धियों को भी समेकित किया गया है । इसके साथ ही उसकी भविष्यत: संभावनाओं को उकेरा गया है ।

प्रत्येक अध्याय के अंत में यथा-संभव निष्कर्षों को प्रस्तुत किया गया है । अध्ययन की सुविधा हेतु शोध प्रबन्ध में अलग-अलग उपशीर्षकों या मुद्दों के लिए युनिटों को निर्देशित किया गया है । शोध प्रबन्ध के अंत में संदर्भिका या ग्रंथानुक्रमणिका (Bibliography) को प्रस्तुत किया गया है । इस खंड को चार परिशिष्टों में विभक्त किया गया है । प्रथम परिशिष्ट में उपजीव्य ग्रंथों की सूची, तृतीय परिशिष्ट में अंग्रेजी के सहायक ग्रंथों की सूची तथा अंतिम और चतुर्थ परिशिष्ट में पत्र-पत्रिकाओं का उल्लेख किया गया है । इन सभी के अकारादि क्रम (Alphabetic Order) का निर्वाह हुआ है ।

भारतीय सभ्यता और संस्कृति में माता-पिता का स्थान शीर्षस्थ होता है । मेरे इस अध्ययन-अध्यवसाय के पीछे मेरे माता-पिता की प्रेरणा और संस्कारों की भूमिका का सविशेष महत्व है । अत: सर्व प्रथम उनके चरणों में अपने प्रणाम निवेदित करती हूँ । नारी या स्त्री को 'द्विज' कहा गया है । विवाह के उपरान्त उसका दूसरा जन्म होता है । मेरे सास-ससुर भी मेरे माता-पिता तुल्य है । उनके आशीर्वादों से ही

मैं अध्यायानिभिमुख हुई हूँ । अत: उनको मैं हृदय से प्रणाम करती हूँ ।

हमारी परंपरा में गुरू का महत्व भी अपरिहार्य होता है । शोध अनुसंधान के कार्य में मार्गदर्शक वही गुरू माना जाता है। मेरे मार्गदर्शक डॉ. भगवानदास कहार की मुझ पर विशेष कृपा रही है । उन्होंने कदम-कदम पर मेरा मार्गदर्शन किया है । और इस महती कार्य में मुझे प्रोत्साहित किया है । गुरू के ऋण से कोई भी व्यक्ति उऋण नहीं हो सकता है । अत: मैं सदैव उनकी ऋणी रहूँगी ।

मेरे इस कार्य में सबसे बड़ा योगदान मेरे पति श्री केतनभाई का रहा है । अनेक कष्टों को सहते हुए भी उन्होंने सदैव मेरा साथ दिया है । इस पूरे कार्यकाल में हमारे पुत्र रुचित को उन्होंने जिस तरह संभाला है और जिस तरह से मुझे प्रोत्साहित किया है उसका स्मरण मेरे लिए स्मृतिप्राथेय ही रहेगा ।

शोध अनुसंधान के इस सुदीर्घ कार्य में हिन्दी विभाग के अध्यक्ष तथा प्रोफेसर डॉ. पारुकान्त देसाई का मुझे सविशेष सहयोग मिला है । डॉ. साहब का शोध अनुसंधान का क्षेत्र ही उपन्यास है । अत: कई स्थानों पर उन्होंने मुझे सलाह सूचन दिए हैं । अत: उनके प्रति मैं अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ । यहाँ हिन्दी विभाग के अन्य वरिष्ठ अध्यापकों के प्रति भी मैं अपने श्रद्धा-सुमन अर्पित करती हूँ । इन में प्रोफेसर गोस्वामी साहब, डॉ. प्रेमलता बाफना, डॉ. अनुराधा दलाल, डॉ. अहीरे आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय है । उत्त गुजरात युनिवर्सिटी के वरिष्ठ अध्यापकों में डॉ. हरीश शुक्ल, डॉ. आर.पी. शाह तथा आर.एम. उपाध्याय साहब के प्रति भी मैं अपनी श्रद्धा व्यक्त करती हूँ, क्योंकि उनकी प्रेरणा से ही मैं एम.ए. तक की शिक्षा संपन्न कर सकी हूँ । अत: यहाँ उनके प्रति आभार व्यक्त करना मैं अपना धर्म समझती हूँ ।

अपनी बुद्धि-मति तथा सामर्थ्य की सीमाओं से मैं भलीभांति परिचित हूँ। अपनी तरफ से मैंने हर संभव प्रयत्न किया है कि इस कार्य को संपूर्णता और

त्रुटिहीनता से सम्पन्न करूँ। परन्तु मनुष्य तो मनुष्य ही है । कहीं न कहीं त्रुटि-दोष तो रह ही जाता है । अत: ऐसी त्रुटियों के लिए मैं क्षमाप्रार्थी हूँ । मेरा यह कार्य शोध-अनुसंधान और विद्या के क्षेत्र में यदि किंचित् भी वृद्धि करता है तो मैं स्वयं को कृतार्थ समझूँगी ।

अंत में बेर्लोल्ट ब्रेष्ट की पंक्तियों को उद्धृत करने का मोह-संवरण नहीं कर पाती हूँ -

हर चीज़ बदलती है ।
अपनी हर आखिरी साँस के साथ
तुम एक ताज़ा शुरूआत कर सकते हो ।

विनीत,
Thakkar Manisha K.
ठक्कर मनीषा केतनकुमार

दिनांक : 17-08-2002

अनुक्रमणिका

अध्याय :: एक :: विषय प्रवेश पृ. : १-६५

प्रास्ताविक - 'उपन्यास' शब्द की व्याख्या - पश्चिम में उपन्यास का विकास - हिन्दी उपन्यास का उदभव और विकास - हिन्दी उपन्यास का विकास प्रेमचंदोत्तर काल - विभिन्न औपन्यासिक प्रवृत्तियाँ - मनोवैज्ञानिक उपन्यास - मनोवैज्ञानिक उपन्यास अवधारणाएँ - मनोवैज्ञानिक उपन्यासों के सृष्टि के कारक - प्रबन्ध हेतु उपजीव्य मनोवैज्ञानिक उपन्यासों की सूची - निष्कर्ष - संदार्भानुक्रम ।

अध्याय :: दो :: मनोवैज्ञानिक उपन्यास : सैद्धान्तिक निरुपण पृ. : ६६-१३०

प्रास्ताविक - मनोवैज्ञानिक क्षण - मनोवैज्ञानिक क्षण : औपन्यासिक उदाहरण - मनोवैज्ञानिक ग्रंथियाँ - लघुता ग्रंथि - प्रभुत्व ग्रंथि - इलेक्ट्रा ग्रंथि - इडीपस ग्रंथि - सादवादी ग्रंथि - मासोकवादी ग्रंथि - सेक्स्युअल परवर्जन की ग्रंथि - फ्रिजीडीटी ग्रंथि - निम्फोमेनिया - फोबिया ग्रंथि - मनोवैज्ञानिक समस्याएँ - शिशु मनोविज्ञान की समस्या - पति-पत्नी के बीच तनाव की समस्या - काम (Sex) की समस्या - अहम् की समस्या - भय की समस्या - कामजनिक कुंठाएँ - अप्राकृतिक कामवृत्तियाँ - कामेच्छा की विपुलता - समलैंगिक काम भावना - गुदा मैथुन - पशु मैथुन - मुख मैथुन - हस्त मैथुन - पीड़ा द्वारा काम संतुष्टि - ट्रान्सवेस्टिजम - निष्कर्ष - संदर्भानुक्रम ।

अध्याय :: तीन :: हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में मनोवैज्ञानिक क्षणों का निरुपण पृ. : १३०-२३६

प्रास्ताविक - त्याग पत्र - सुनीता - अनामस्वामी - परख - मुक्तिबोध - पानी बीच मीन पियासी - प्रेत और छाया - शेखर एक जीवनी - अपने अपने अज़नबी - नदी के द्वीप - रेखा - ड़ाक बंगला - तीसरा आदमी - अंधेरे बन्द कमरे - मछली मरी हुई - पचपन खंभे लाल दीवारें - सूरजमुखी अंधेरे के - आपका बंटी - कृष्ण कली - वे दिन - अनदेखे अनज़ान पुल - बे घर - आँखो की दहलीज़ - चित्त कोबरा - पतझड़ की आवाज़ें - सीढ़ियाँ - नावें - तत्सम् - बँटता हुआ आदमी - रेत की मछली - कोबरे - निष्कर्ष - संदर्भानुक्रम ।

अध्याय :: चार :: हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में मनोवैज्ञानिक ग्रंथियों का निरुपण पृ. : २३७-२९३

प्रास्ताविक - मनोवैज्ञानिक ग्रंथियाँ और मानव व्यवहार - विविध प्रकार की मनोवैज्ञानिक ग्रंथियाँ - लघुता ग्रंथि - प्रभुत्व ग्रंथि - बद्धत्व ग्रंथि - इलेक्ट्रा ग्रंथि - इडीपस ग्रंथि - फोबीया ग्रंथि - यौन ग्रंथियाँ - सादवादी और मासोकवादी ग्रंथि - इन ग्रंथियों के आदार पर विवेच्य उपन्यासों में उनका विश्लेषण परक अध्ययन - निष्कर्ष - संदर्भानुक्रम ।

अध्याय :: पाँच :: हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में मनोवैज्ञानिक समस्याओं का निरुपण पृ. : २९४-३४९

प्रास्ताविक - मनोवैज्ञानिक समस्याएँ - वैयक्तिक जीवन के संदर्भ में - पारिवारिक जीवन के संदर्भ में - सामाजिक जीवन के संदर्भ में - आर्थिक पक्ष के संदर्भ में - जैविक स्थिति के संदर्भ में - सांस्कृतिक मान्यताओं के संदर्भ में - यौन समस्याएँ - निष्कर्ष - संदर्भानुक्रम ।

अध्याय :: छ :: हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में मनोवैज्ञानिक काम-कुंठाओं का निरुपण पृ. : ३५०-३९२

प्रास्ताविक - किशोर तथा युवावस्था के स्त्री पुरुषों में काम-कुंठाओं का चित्रण - प्रोठ अथवा वृद्धावस्था के स्त्री पुरुषों में काम-कुंठाओं का चित्रण - शिशु अवस्था की बाल-बालिकाओं में काम-कुंठाओं का चित्रण - काम-कुंठाओं के परिणाम - जाती ठंडापन - नपुंसकता - पुरुष समलैंगिकता - स्त्री समलैंगिकता - गुदामार्गीय मैथुन - हस्त मैथुन - पशु मैथुन - ट्रान्सवेस्टिजम - जातीय वृत्ति का आधिक्य - अश्लील साहित्यल (erotics) का पठन-पाठन - निष्कर्ष - संदर्भानुक्रम ।